मनुष्य ने पेड़ों पर ही सीखा था चलना

प्रवीण कुमार

माना जाता है कि जिस दिन से हमारे आदिम पूर्वजों यानी चिम्पैंज़ी ने दो पैरों पर चलना सीख लिया था, उसी दिन से वे मानव बन गए थे। हालांकि इसके बावजूद वे लंबे समय तक पेड़ों पर ही रहे। यानी प्रारंभिक मनुष्य के विकास की धारा पेड़ों पर ही करवट लेने लगी थी। इसी विकास क्रम पर केंद्रित है यह आलेख।

'मुर्गी पहले या अंडा' की तरह ही एक यह सवाल भी उठता रहा है कि मानव के पूर्वजों (चिम्पैंज़ी या ओरांगुटान) ने पेड़ पर रहने के दौरान ही दो पैरों पर चलना सीख लिया था या फिर ज़मीन पर उतरने के बाद उन्होंने ऐसा किया? हाल ही में किए गए अध्ययन इस पहेली को सुलझाने का दावा करते हैं। उनके अनुसार पेड़ों पर रहने के दौरान ही हमारे पूर्वज दो पैरों पर चलने लगे थे। हालांकि इसके बाद भी वे लंबे अर्से तक पेड़ों को नहीं छोड़ पाए। बाद में जलवायु परिवर्तन की वजह से उन्हें धरती पर उतरना पड़ा।

बर्मिंगहैम विश्वविद्यालय (ब्रिटेन) के सुज़ाना थोर्प और उनके साथियों ने सुमात्रा (इंडोनेशिया) के गुनुंग लेंसर नेशनल पार्क में एक साल के दौरान ओरांगुटान पर करीब 3,000 अवलोकन किए। इसमें उन्होंने पाया कि जब वे पेड़ की सबसे पतली शाखा (4 से.मी. से कम व्यास वाली) पर होते हैं तो अपने पिछले पैरों पर चलने का प्रयास करते हैं। इस समय उनके हाथ उनका मार्गदर्शन करते हैं। मध्यम गोलाई वाली शाखा (4 से 20 से.मी. के बीच व्यास वाली) पर वे दो पैरों पर चलने को प्रवृत्त होते हैं, लेकिन शाखाओं से लटकने व झूलने के दौरान शरीर के वज़न को संभालने में वे हाथों का इस्तेमाल करते हैं। मात्र 20 से.मी. से मोटी शाखाओं पर ही वे चारों पैरों से चलते हैं।

थोर्प कहती हैं कि पतली शाखाओं पर चलने की क्षमता फलों तक उनकी पहुंच को आसान बना देती है। यह क्षमता उन्हें एक पेड़ से दूसरे पेड़ तक छलांग लगाने में भी सहायता करती है क्योंकि ऐसा करने के लिए उन्हें शाखाओं के पतले हिस्सों के ज़रिए ही जाना पड़ता है।

ग्रेट एप्स, जैसे चिम्पैंज़ी, बोनोबो, गोरिल्ला, ओरांगुटान और गिब्बन में से केवल ओरांगुटान ही ऐसे हैं जो अब भी पेड़ों पर ही रहते हैं। इससे वे हमारे पूर्वज बंदरों पर पड़ने वाले विभिन्न दबावों को समझने के लिए बेहतर मॉडल हैं। हालांकि अनुवांशिक रूप से देखा जाए तो ओरांगुटान हमारे पूर्वज बंदरों में सबसे दूर के 'रिश्तेदार' हैं, जबकि सबसे निकट के रिश्तेदार चिम्पैंज़ी माने जाते हैं। करीब 60 लाख

साल पहले बोनोबो और चिम्पैंज़ी से अलग होकर मनुष्य का विकास होना शुरू हुआ था, जबकि ओरांगुटान से तो मानव काफी पहले यानी करीब एक करोड़ साल पहले ही अलग हो गया था। इसके बावजूद ओरांगुटान की चाल हम मनुष्यों की चाल के काफी निकट है। वे सीधे होकर चलते हैं, जबकि चिम्पैंज़ी घुटनों व धड़ को झुकाकर चलते हैं। इससे लगता है कि जब मनुष्य के आदिम पूर्वजों ने जंगल छोड़ा होगा तो उसे ओरांगुटान के इसी कौशल का लाभ मिला होगा। इसे दूसरे शब्दों में यों भी कहा जा सकता है कि धरती पर उतरने से पहले ही आदिम पूर्वजों ने पेड़ों पर ही दो पैरों पर चलना सीख लिया था।

जब मायोसीन काल (2.4 करोड़ से 50 लाख साल पहले) में जलवायु में परिवर्तन से जंगलों का घनत्व कम होना शुरू हुआ, तो चिंपैंज़ी व गोरिल्ला एक पेड़ से दूसरे पेड़ तक घुटनों के बल जाने लगे, जबकि अन्य मानव पूर्वज छोटे पेड़ों व धरती पर पड़े फलों को बीनने के लिए दो पैरों का इस्तेमाल कर चलने लगे। लंदन स्थित नेचुरल हिस्ट्री म्यूज़ियम में जीवाश्म विशेषज्ञ क्रिस स्ट्रिंगर कहते हैं कि थोर्पे का यह विचार नया तो नहीं है, लेकिन यह मानव के दो पैरों पर खड़ा होकर चलने सम्बंधी विकास यात्रा को समझने में महत्वपूर्ण है।

शुरुआती मानव के जीवाश्म बहुत कम मिलते हैं, लेकिन दोपाएपन के विकास सम्बंधी हालिया विचार की पुष्टि वर्ष 1992 में अदिस अबाबा (इथियोपिया) के पास स्थित एक गांव अरामिस में प्राप्त होमिनिड या मनुष्य-सदृश जीवाश्म से होती है। इसे *ऑस्ट्रेलोपेथिकस रैमिडस* नाम दिया गया था। यह जीवाश्म चिम्पैंज़ी के काफी करीब है। इस प्रकार का जीवाश्म इससे पहले कभी प्राप्त नहीं किया जा सका था। इसके छोटे कपाल और कृदंत (कैनाइन) के आकार से साफ हो जाता है कि यह प्रजाति बंदर से पहले ही अलग हो गई थी और उसका मानव के रूप में विकास होना भी प्रारंभ हो चुका था। यह जीवाश्म जिस तरह से लकड़ियों के बीच मिला है, उससे भी सिद्ध हो जाता है कि मानव के दूरस्थ पूर्वज जंगल छोड़ने से पहले से ही दो पैरों पर चलने लगे थे।

ऑस्ट्रेलोपेथिकस रैमिडस की अनुमानित आयु 44 लाख साल आंकी गई है, यानी *ल्यूसी* या *ऑस्ट्रेलोपेथिकस अफारेन्सिस* से भी 8 लाख साल पुराना। यह जीवाश्म वर्ष 1974 में इथियोपिया के अफार व हादर क्षेत्र में पाया गया था। इसे ल्यूसी नाम बीटल्स के गीत *ल्यूसी इन दी स्काय विद डायमंड्स* से दिया गया था। यह एक मादा का जीवाश्म था। उसके कमर के घेरे से ही पता चलता था कि वह पूरी तरह से दौ पैरों पर चलने वाली प्रजाति का जीवाश्म था। उसके अंदरूनी कान की अर्द्ध वृत्ताकार नलियों से स्पष्ट था कि *ल्यूसी* ने उछलने व चलने जैसे जटिल कार्य की बजाय ऊपर चढ़ने का काम ज़्यादा किया होगा। कान की अर्द्ध वृत्ताकार नलियां दो पैरों पर चलने के दौरान संतुलन बनाए रखने में अहम भूमिका निभाती हैं।

दो पैरों पर चलने के लाभ

चलने में चारों पैरों का इस्तेमाल करने से गति बढ़ जाती है, लेकिन यह भी तय है कि दो पैरों की गति का अपना विशेष महत्व होगा, अन्यथा चार पैरों से दो पैरों में स्वाभाविक प्राकृतिक बदलाव नहीं होता। दो पैरों पर चलने से शरीर के कद में बढ़ोतरी हुई। ऊंचे कद से खतरे को दूर से भी देखा जा सकता है और इस प्रकार शत्रु से बचने के लिए अधिक समय मिल जाता है। यही नहीं, सीधे खड़े होकर चलने से शरीर का वज़न सभी अंगों पर बराबर पड़ता है, यानी शरीर संतुलित रहता है। इस प्रकार बंदर से मनुष्य में परिवर्तन के क्रम में दो पैरों की गति एक अहम पड़ाव था।

गति सम्बंधी तीन परिवर्तनों - हाथों के सहारे झूलना, आंशिक दोपाया चाल और घुटनों के बल चलने के साथ-साथ एक अहम बदलाव और आया। घ्राण शक्ति कम होती गई और देखने की क्षमता में इजाफा हुआ। यही नहीं, परिवर्तन की हर घटना के बाद मस्तिष्क का आकार भी बढ़ता गया। बंदर प्रजाति के मस्तिष्क का आकार 400 घन से.मी. होता है जो आधुनिक मनुष्य में बढ़कर

1,500 घन से.मी. हो गया है।

जैसे-जैसे प्रारंभिक मनुष्य ने दिमाग का इस्तेमाल शुरू किया, उसके शरीर का आकार घटता गया, क्योंकि अब उसे बलिष्ठ शरीर की ज़रूरत कम पड़ने लगी थी। उसने अपने आसपास के उपादानों, जैसे औज़ारों व सामान ढोने वाले जानवरों का इस्तेमाल करना सीख लिया था। उसने शिकार करना, पशुओं को चराना और पशुओं के शवों का इस्तेमाल करना भी शुरू कर दिया था। आधुनिक मानव जिस जीनस *होमो* से सम्बंध रखता है, उसके जीवाश्मों से पता चलता है कि उसका मस्तिष्क व शरीर दोनों आकार में बड़े थे, लेकिन दांत छोटे थे। इससे साफ है कि *होमो* जीनस *ऑस्ट्रेलोपेथिकस* की तुलना में दांतों का इस्तेमाल कम करती थी, क्योंकि वह रेशेदार की बजाय पौष्टिक भोजन खाती थी।

दो पैरों की चाल के विकास को प्रकृति से इसलिए भी समर्थन मिला क्योंकि इसमें ऊर्जा की खपत कम होती है। इसकी पुष्टि ट्रेडमिल अध्ययन से भी होती है जिसमें मनुष्य की दो पैरों की गति और चिम्पैंज़ी की घुटनों के बल चाल का अध्ययन किया गया। इसमें चिम्पैंज़ी को भी दो पैरों पर चलना सिखाया गया था। शोध पत्र के लेखकों में से एक डेविड राइच्लेन के अनुसार यह अध्ययन इस तथ्य का समर्थन करता है कि ऊर्जा की बचत ने दोपाया चाल के विकास में अहम भूमिका निभाई है। यह अध्ययन हाल ही में *प्रोसीडिंग्स ऑफ द नेशनल एकेडमी ऑफ साइंसेज़* में प्रकाशित हुआ है।

सीधे तनकर खड़े होने की मुद्रा की वजह से हाथ मुक्त हो गए जिनका इस्तेमाल फल एकत्र करने और छोटे बच्चों को संभालने में होने लगा। एकत्रित फलों में हिस्सेदारी से पारिवारिक जीवन और पारस्परिक संवाद की नींव पड़ी। कहते हैं इस संवाद से भाषा विकास में भी मदद मिली।

ऐसा भी नहीं है कि यह सब कुछ वरदान ही साबित हुआ। तने हुए शरीर का पूरा वज़न नीचे की ओर पड़ता है जिससे मेरुदंड की मुलायम डिस्क को नुकसान पहुंचता है। ये मुलायम डिस्क शॉक एब्ज़ॉर्बर का काम करती हैं और भार को पूरे मेरुदंड पर संतुलित कर देती हैं। वृद्धावस्था में डिस्क में से पानी सूख जाता है और वे सख्त हो जाती हैं। ऐसी स्थिति में इन डिस्क पर असामान्य दबाव पड़ने पर वे टूट जाती हैं या उनमें बाहर की ओर उभार आ जाता है। इसी समस्या को आज हम 'स्लिप्ड डिस्क' के नाम से जानते हैं। मानव निर्मित कोई भी स्प्रिंग मेरुदंड या रीढ़ की हड्डी से बेहतर काम नहीं कर सकती। जैसे-जैसे हम बूढ़े होते जाते हैं, वैसे-वैसे मेरुदंड के लचीलेपन में कमी आती जाती है। कंधे भी झुकते जाते हैं और इस प्रकार व्यक्ति का पूरा शरीर ही ढलता जाता है।

यानी कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि स्वाभाविक प्राकृतिक लाभों ने हमें 'सुपर-बंदर' बनाने में भूमिका ज़रूर निभाई, लेकिन इसकी कीमत भी चुकानी पड़ी है। ***(स्रोत फीचर्स)***

स्रोत के ग्राहक बनें, बनाएं

वार्षिक सदस्यता

सिर्फ 150 रुपए

सदस्यता शुल्क एकलव्य, भोपाल

के नाम ड्राफ्ट या मनीऑर्डर से

एकलव्य, ई-7/ एच.आई.जी. 453, अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.) 462 016

के पते पर भेजें।